# कृषि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

**मूलाराम, जे.सी. तिवारी, प्रदीप कुमार** और **पी.आर. मेघवाल**
केंद्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)

पिछले 100 वर्ष के दौरान जहां अखिल भारतीय स्तर पर मानसून वर्षा में कोई प्रवृत्ति नहीं हैं, लेकिन वहीं कुछ क्षेत्रीय पैटर्न देखे गए हैं। पश्चिमी तट, उत्तरी आंध्र प्रदेश और उत्तर-पश्चिमी भारत के क्षेत्रों में मानसून वर्षा में वृद्धि की प्रवृत्ति हुई हैं तथा गुजरात और केरल के कुछ हिस्सों, उत्तर-पूर्वी भारत, पूर्वी मध्य प्रदेश और आस-पास के इलाकों में मानसून वर्षा में कमी पाई गई है। 100 वर्ष (1901-2000) के सतही वायु तापमान में वृद्धि ($4^0$ से.) एक महत्वपूर्ण वार्मिंग इंगित करता है।

साल 2009 अब तक का सबसे गर्म साल था और मार्च 2010, 1900 के बाद दूसरा सबसे गर्म मार्च था। तापमान परिवर्तन के स्थानिक वितरण, पश्चिम तट, मध्य भारत, आंतरिक प्रायद्वीप और उत्तर पूर्वी भारत में एक महत्वपूर्ण वार्मिंग के प्रवृत्ति का संकेत देता है, हालांकि, उत्तर-पश्चिमी और दक्षिणी भारत के कुछ भागों में ठंडा होने की प्रवृत्ति दर्शाता है। पिछले 130 से अधिक वर्षों के रिकार्ड बड़े पैमाने पर मानसून के मौसम में सूखा या बाढ़ की आवृत्तियों में कोई महत्वपूर्ण दीर्घकालिक रुझान नहीं दिखाते हैं। बंगाल की खाड़ी के ऊपर चक्रवाती तूफानों की कुल आवृत्ति पिछले 100 वर्षों के दौरान (1887-1997) लगभग स्थिर बनी हुई है। सबूत है कि हिमालय में ग्लेशियर तेजी से घटते चले जा रहे हैं, और समुद्र तल 10-25 सें.मी. प्रति 100 साल की दर से बढ़ रहा है।

## भारतीय कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

- कार्बन डाइऑक्साइड में वृद्धि कई फसलों के लिए फायदेमंद होने की संभावना है, संबद्ध तापमान में वृद्धि और बारिश की परिवर्तनशीलता से खाद्य उत्पादन काफी प्रभावित होगा। हाल ही में आईपीसीसी की रिपोर्ट और कुछ अन्य वैश्विक अध्ययनों में 2080 से 2100 तक तापमान में बढ़ोत्तरी से भारत में फसल उत्पादन में 10-40 प्रतिशत तक नुकसान की संभाव्यता का संकेत मिलता है।
- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में किए गए अध्ययन संकेत देते हैं कि भविष्य में गेहूं की बढ़वार अवधि में हर $1^0$ से. तापमान की वृद्धि के साथ उत्पादन में 4-5 टन मिलियन तक के नुकसान की संभावना हैं। अन्य फसलों के लिए

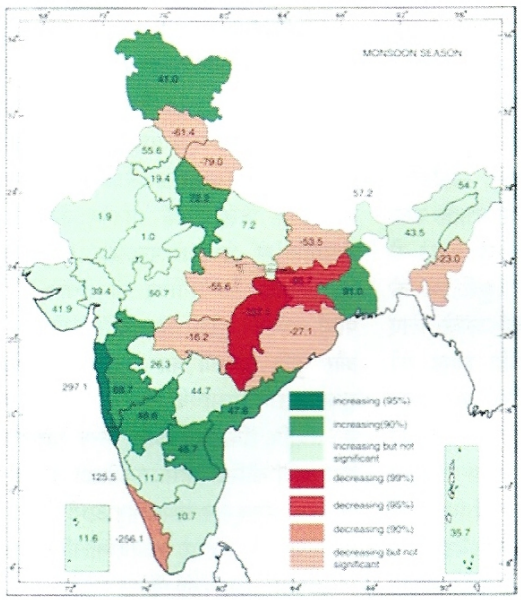


पिछले सौ वर्षों में दक्षिणी-पश्चिमी मानसून की वर्षा में बढ़ाव और घटाव (मि.मी. में)

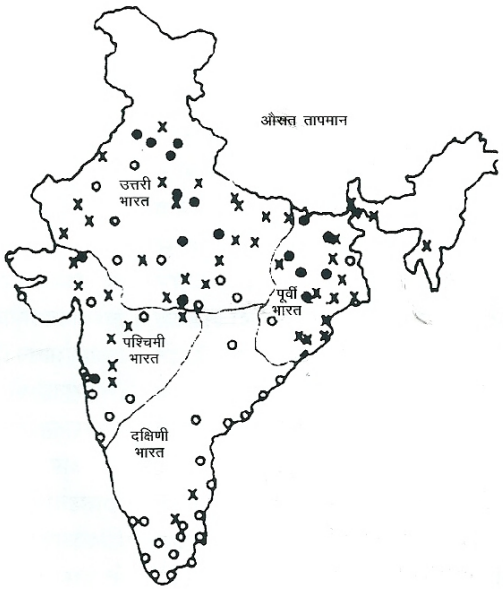


सौ वर्षों में वार्षिक औसत तापमान की प्रवृत्ति (X-कोई प्रवृत्ति नहीं, O-बढ़ती प्रवृत्ति, ●-घटती प्रवृत्ति )

नुकसान अभी भी अनिश्चित है लेकिन वे अपेक्षाकृत छोटे आंकलन के रूप में विशेष रूप से खरीफ फसलों के लिए, होने की उम्मीद कर रहे हैं।

- ग्लोबल वार्मिंग से जुड़े जलवायु परिवर्तनशीलता में वृद्धि के कारण खाद्य उत्पादन में काफी मौसमी/वार्षिक उतार चढ़ाव होगा। सभी कृषि जिसे आज भी ऐसे परिवर्तनेशीलता के प्रति संवेदनशील हैं। सूखा, बाढ़, उष्णकटिबंधीय चक्रवात, भारी वर्षा की घटनाएं, गर्म हवाएं और कृषि उत्पादन और किसानों की आजीविका पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इन घटनाओं में अनुमानित वृद्धि खाद्य उत्पादन में अधिक से अधिक अस्थिरता और किसानों की आजीविका सुरक्षा के खतरे में रूप में परिणित होगी।
- हिमालय में ग्लेशियर पिघलने की बढ़ती घटना से सिंचाई की उपलब्धता विशेष रूप से गंगा के मैदानी इलाकों को प्रभावित करेगी जो बदले में, हमारे खाद्य उत्पादन पर असर करेगी।
- लघु अवधि में ग्लोबल वार्मिंग शीतोष्ण क्षेत्रों (मुख्यत: उत्तरी यूरोप, उत्तरी अमेरिका) में कृषि उत्पादन के सकारात्मक पक्ष में हैं जबकि उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों (दक्षिण एशिया, अफ्रीका) में फसल उत्पादन पर इसके नकारात्मक प्रभाव की संभावना है, जिसके परिणामस्वरुप अंतर्राष्ट्रीय खाद्य कीमतों और व्यापार पर असर होगा और इस प्रकार हमारी खाद्य सुरक्षा पर विपरित परिणाम हो सकते हैं।
- तापमान और वर्षा में छोटे से परिवर्तन का अनाज, फल, औषधीय और खुशबूदार पौधों की गुणवत्ता पर प्रभाव पड़ सकता है, जिसके स्वरूप उनके मूल्यों और व्यापार पर प्रभाव पड़ेगा।
- कीटों और रोगजनकों की आबादी मुख्यत: तापमान और आर्द्रता पर निर्भर होती है, इन मानकों में वृद्धि उनकी जनसंख्या गतिशीलता बदल देगी, जिसके परिणामस्वरूप उपज में नुकसान हो सकता है।
- ग्लोबल वार्मिंग अनुमानित दूध मांग को पूरा करने के लिए पशुओं की पानी, आवास, और ऊर्जा आवश्यकता बढ़ा सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण डेरी पशुओं में गर्मी से तनाव बढ़ जाने की संभावना है, जो उनकी उत्पादन और प्रजनन क्षमता को प्रतिकूल रुप में प्रभावित करेगा। एक प्रारंभिक आंकलन इंगित करता है कि ग्लोबल वार्मिंग से भारत में 2020 तक दूध उत्पादन में 1.6 मिलियन टन घाटा होने की संभावना है।
- समुद्र और नदी के पानी का तापमान बढ़ने से मछली प्रजनन, प्रवास और उपज के प्रभावित होने की संभावना है। तापमान में छोटे से छोटे $1^0$ से. के रूप में वृद्धि भी मछली की मृत्यु दर और उनकी भौगोलिक वितरण पर महत्वपूर्ण व तेज प्रभाव डाल सकती है। तेल चुन्नी मत्स्य जो 1976 से पहले उत्तरी अक्षांश में और पूर्वी तट के साथ मौजूद नहीं था क्योंकि उसके लिए संसाधन उपलब्ध नहीं थे और समुद्र की सतह के तापमान अनुकूल नहीं थे। समुद्र सतह की वार्मिंग के साथ, तेल चुन्नी को अपनी पसंद के तापमान, विशेष रूप से उत्तरी अक्षांश और पूर्वी देशांतर में मिलने से इसके वितरणात्मक सीमाओं का विस्तार हो रहा है और बड़े तटीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन की स्थापना हो रही है।
- हिंद महासागर में मूंगों (कोरल) को जल्दी ही गर्मियों में पिछले 20 वर्षों में उजागर थर्मल थ्रेशहोल्ड तापमान से भी अधिक तापमान का सामना करना होगा।

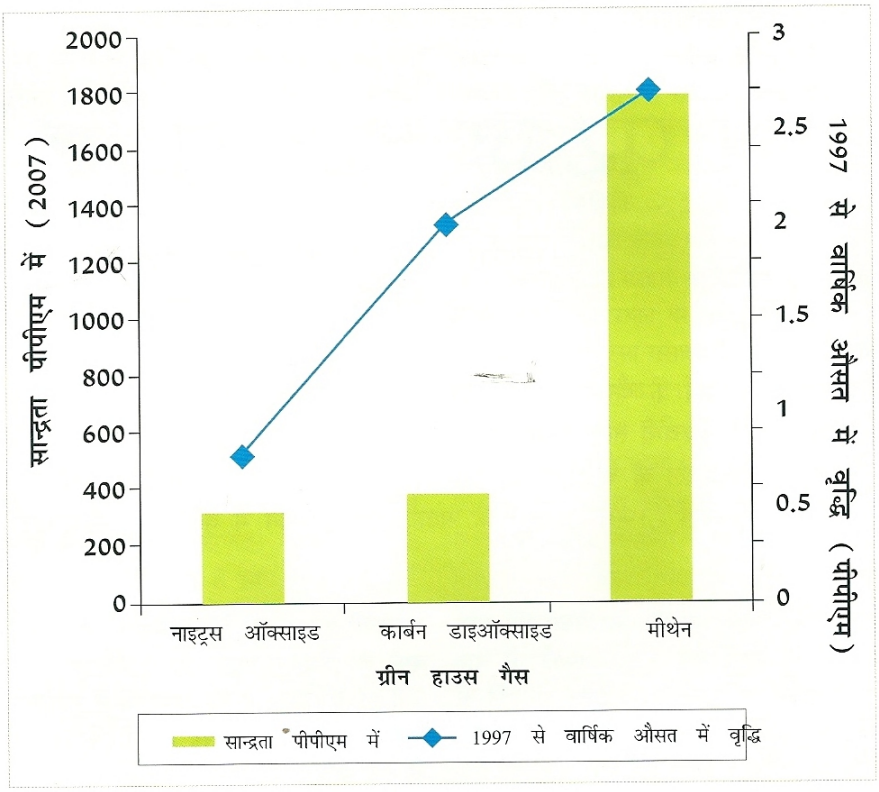


वर्ष 1997 के मुकाबले वर्ष 2007 में प्रमुख ग्रीन हाउस गैसों की सांद्रता में वार्षिक औसत वृद्धि (पीपीएम)

## जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के लिए रणनीतियां

अनियमित व उच्च तापमान में सक्षम फसलों व उनकी किस्मों के विकास में अधिक से अधिक ध्यान देने की जरूरत है, जबकि फसल वृद्धि नियामकों और मिट्टी-पानी एवं पौधों के संबंध, कार्बन डाइऑक्साइड के बदलते स्तरों का व्यक्तिगत फसलों के अनाज और बायोमास उत्पादन में प्रभाव पर भी अनुसंधान की आवश्यकता है। वर्तमान अनुसंधान में फसली पौधों, उनके सूखा और कीट प्रतिरोधी क्षमता और कृषि प्रथाओं का पानी उपयोग दक्षता में सुधार पर भी अधिक जोर देने की जरूरत है। ये, तथापि, किसानों और अन्य हितधारकों के लिए एक सीमित सीमा तक घाटे को कम करने के लिए अनुकूलन संभव है। अभी तक किए गए अनुसंधान के आधार पर निम्नलिखित अनुकूलन रणनीतियां सुझाई गई हैं :

- **फसलों की शस्य क्रियाओं में परिवर्तन:** सरल रूपांतरण जैसे रोपण तिथि और फसल

किस्मों में परिवर्तन कुछ हद तक जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में मदद कर सकता है। उदाहरण के रूप में, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में ऊपर उद्धृत अध्ययन से ज्ञात गेहूं के उत्पादन में भविष्य में होने वाले नुकसान को 4-5 टन मिलियन से 1-2 टन मिलियन तक कम किया जा सकता है अगर एक बड़े प्रतिशत में किसान समय पर रोपण व बेहतर अनुकूलित किस्मों को अपनाएं। रोपण का यह परिवर्तन, तथापि, देश के विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में फसल प्रणालियों के परिप्रेक्ष्य में जांचा जाना चाहिए। पौधों का अंतरालन और इनपुट की आपूर्ति के प्रबंधन इत्यादि भी कुछ मानकों में जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने में मदद कर सकते हैं। बदलते पर्यावरण के अधिक अनुकूल वैकल्पिक फसलों व उनकी किस्मों का विकास जलवायु परिवर्तन के दबाव को और अधिक कम कर सकते हैं।

- **संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों का विकास:** संसाधन संरक्षण तकनीकों का प्रयोग जैसे सतही बुआई या शून्य जुताई के साथ बुआई, मिट्टी में कार्बन जब्ती (कार्बन स्क्विवस्ट्रेशन) की प्रक्रिया से न केवल वातावरण में मिट्टी से कार्बन की मुक्ति सीमित करते हैं, बल्कि आसमान में कार्बन डाइऑक्साइड की कमी करके आंशिक रूप से प्रतिकूल जलवायु का सामना करने में भी मदद करते हैं और बेहतर उपज प्रदान करते हैं या उपज स्थिर करने में मदद करते हैं। उदाहरण के लिए धान की फसलों के बाद अपलेण्ड फसलों की सतही बुआई या शून्य जुताई के साथ बौने से पैदावार उतनी ही होती है, जितनी सामान्य पारंपरिक जुताई के तहत मिट्टी की विविध सेट की स्थिति में बुआई करने पर होती है। हालांकि, विभिन्न कृषि जलवायु भूमि में सतही बुआई या शून्य जुताई की प्रयोज्यता के लिए और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है।
- **विविधा खेती:** एकल फसल की जगह एक विविध कृषि प्रणाली को अपनाना अत्यधिक आवश्यक हो रहा है। बागवानी और कृषि वानिकी को और अधिक प्रोत्साहन दिए जाने की जरूरत है, जबकि शुष्क भूमि में पशुओं के लिए चारागाह या बायोमास विकास, जो व्यक्तिगत किसान की अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख घटक बन जाता है पर ज्यादा जोर देना आवश्यक है। अधिक संवेदनशील शुष्क क्षेत्रों में कृषि भूमि का उपयोग बजाय उत्पादकता बढ़ाने के लिए जोखिम प्रबंधन और उत्पादन को बनाए रखने करने के लिए फसल को अनुकूलित किया जाना चाहिए।
- **कृषि उद्यमों से आय में वृद्धि:** स्थान विशेष की जरुरतों के मुताबिक उर्वरक प्रथाओं का प्रयोग, उर्वरक आपूर्ति और वितरण में सुधार, विस्तार सेवाओं और शारीरिक और संस्थागत बुनियादी सुविधाओं के विकास आदि कार्य, उर्वरक उपयोग की दक्षता में सुधार कर सकते हैं और उत्पादन की लागत को कम।
- **फसल प्रबंधन रणनीतियां:** फसल प्रबंधन रणनीतियां, वर्षा आधारित परिस्थितियों में उच्च पैदावार प्राप्त करने के लिए उपलब्ध जलवायु संसाधनों और किसानों की जरूरत के आधार पर भिन्न हो सकते हैं। फसल प्रबंधन प्रथाओं जैसे फसलों की समय पर बुआई, पर्याप्त एवं सुरक्षित पादप रखरखाव, पोषक तत्व प्रबंधन, जुताई, पादप विशेषताओं में सुधार, खरपतवार, कीटों और बीमारियों का नियंत्रण आदि महत्वपूर्ण हैं। फसल का अंकुरण और स्थापन अच्छा होता है, जब बीज रोपण उपयुक्त उपकरणों के साथ अच्छी तरह से तैयार बीज क्यारियां में लगाया जाता है। उच्च गुणवत्ता वाले बीजों का प्रयोग फसल स्थापना की एकरूपता में सुधार लाते हैं। विभिन्न फसलों के बेहतर किस्में आज उपलब्ध है, जो जल्दी तैयार होने के साथ-साथ उच्च फसल सूचकांक वाले होते हैं और अनाज की पैदावार स्थानीय किस्मों से अधिक देते हैं, का चयन करना चाहिए। कीट और रोगों के प्रतिरोधी किस्मों का चयन और उनका समय पर नियंत्रण करके उपज और पानी उपयोग की उच्च दक्षता प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार, खरपतवारों का समय पर और कुशल प्रबंधन करना बहुत आवश्यक है।
- **संसाधन प्रबंधन के लिए एक स्थायी नीति:** फसल बीमा नीतियों को सक्षम बनाने के लिए (विशेष रूप से सूखे और बाढ़ के प्रभाव का सामना करने के लिए), सब्सिडी, पानी और ऊर्जा के उपयोग से संबंधित मूल्य निर्धारण की नीति को जल्द से जल्द मजबूत किए जाने की जरूरत है। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ को समृद्ध करने के लिए और इस तरह मिट्टी के स्वास्थ्य को मजबूत बनाने के लिए किसानों को प्रोत्साहित करने वाली नीतियों (जैसे-वित्तीय मुआवजा या हरी खाद के लिए प्रोत्साहन आदि) को अपनाने की जरूरत हैं।
- **पूर्व चेतावनी और फसल बीमा के माध्यम से जोखिम प्रबंधन:** यह आवश्यक है कि मौसम और अन्य पर्यावरणीय मानकों में अस्थायी परिवर्तन की पूर्व जानकारी के लिए एक मजबूत चेतावनी प्रणाली को विकसित की जाए। वर्तमान मौसम की भविष्यवाणी प्रणाली को एक स्थानिक संकल्प में और अधिक परिष्कृत एवं बेहतर बनाने की आवश्यकता है। सूचना प्रौद्योगिकी के आधुनिक उपकरणों के समावेश के साथ सूचना के प्रसार प्रणाली को और अधिक व्यवस्थित करने की आवश्यकता है।

## भविष्य के जलवायु : अनुमान व चुनौतियां

यह अनुमान है कि 21वीं सदी के अंत तक वर्षा में 15-31 प्रतिशत और औसत वार्षिक तापमान में 3-6$^0$ से. तक की वृद्धि होगी। स्पष्ट है कि उत्तरी भारत में अधिकतम वृद्धि के साथ वार्मिंग का असर जल क्षेत्रों की बजाय भूमि क्षेत्रों पर अधिक होगा। भारतीय उपमहाद्वीप के लिए अलग-अलग जलवायु मॉडलों द्वारा सिमुलेट परिदृश्य को देखते हुए ऐसा लगता है कि चर जलवायु में बदलाव के परिमाण और प्रकार अब तक देखे गए पैटर्न से कुछ अलग होंगे अत: अधिक उपज लाभ व फसलों का पर्यावरण के प्रति उन्नत अनुकूलन के लिए, किसानों और वैज्ञानिक समुदाय द्वारा अब तक विकसित की गई जलवायु पैटर्न के लिए प्रतिक्रिया तंत्र, भविष्य में जलवायु परिवर्तन के लिए ज्यादा काम देने में सक्षम नहीं हो सकते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि एक उच्च स्थानिक संकल्प के साथ जलवायु के सभी मानकों व इलाके के विशेष मानकों में परिवर्तन पर कड़ी निगरानी रखी जाए ताकि फसल अनुकूलन और उपज लाभ को पाने हेतु प्रतिक्रिया तंत्र के विकास के लिए जलवायु परिवर्तन के पैटर्न को ठीक

(शेष पृष्ठ 33 पर)

(पृष्ठ 11 का शेष)
जलवायु परिवर्तन...

समझा जा सके। फसल उपज में सुधार के लिए सबसे महत्वपूर्ण अनुसंधान हस्तक्षेप यह होगा कि खरीफ और रबी की ऐसी किस्में विकसित की जाय जो अनियमित तापमान व संभावित कम या अधिक बरसात के मौसम में अच्छी तरह प्रदर्शन कर सकती हो। शस्य क्रियाओं, विशेष रूप से कीट और खरपतवार प्रबंधन के लिए और अधिक ध्यान देने की जरूरत है, जबकि हवा व जल कटाव नियंत्रण कार्यक्रमों को और मजबूत बनाने की आवश्यकता हो सकती है। एक लंबे समय के पैमाने पर वृद्धि हुई कार्बन डाइऑक्साइड के प्रभाव अनाज बनाम पत्ती उपज, साथ ही साथ कैलोरी मूल्यों में महसूस किया जा सकता है, जिसके शोध पर उच्च ध्यान देने की आवश्यकता होगी। कार्बन डाइऑक्साइड के बदलते स्तर से पादप का बायोमास विभाजन प्रभावित हो जाएगा जो खाद्य और चारा उपलब्धता को प्रभावित करेगा और इन आवश्यकताओं को पूरा करने की योजना के लिए संसाधनों के समुचित आकलन की जरूरत होगी।